महाभारत

महाभारत भारत का राष्ट्रीय ऐतिहासिक काव्य तथा आर्य-जीवन की विराट् और सार्वभौमिक महत्त्व से युक्त महागाथा है। इसके विशाल कलेवर का इस प्रकार निर्माण किया गया है, जिसमें पुराण, इतिहास, महाकाव्य धर्मशास्त्र तथा नीतिदर्शन का मिश्रित स्वरूप प्रतिबिंबित होता है। प्रसिद्ध भारतीय विद्याविद् डॉ॰ विन्टरनित्स ने इसे अत्यन्त सीमित अर्थ में इतिहास और काव्य कहा है, किन्तु वास्तव में वे इसे अपने में एक पूर्ण साहित्य मानते हैं। भारतीय मनीषा ने शताब्दियों से प्रवाहमान जिस ज्ञान और विचारणा का अन्वेषण किया था और युग-युग से भारत ने सुचिंतित ढंग से जीवन की जो व्याख्या प्रस्तुत की थी; उन सबों का अखण्ड रूप एक प्राण होकर महाभारत में उत्कीर्ण है। यह ऐसा ज्ञान कोश है, जिसमें मानव मस्तिष्क की समस्त चिन्तन परम्परा और सांस्कृतिक चेतना आकर समाहित हो गयी है। एक वाक्य में यह एक महान् विश्वकोष है। इसमें ज्ञान के प्रत्येक पक्ष का केवल संस्पर्श ही नहीं किया गया है, अपितु यह अपने सर्वांगी कलेवर में विभिन्न विषयों की सर्वोच्च मान्यताओं और चिंतन-सरणियों को गुंफित कर भारत का ज्ञान-सर्वस्व होने के कारण आर्ष ग्रन्थ या पंचम-वेद के रूप में प्रतिष्ठित है।

महाभारत भारतीय जीवन, विशेषतः हिन्दू जनता का जातीय इतिव त्त है; इसकी रचना एक लाख श्लोकों में हुई है। यह विश्व-साहित्य में सबसे विस्त त महाकाव्य है, जो इलियड और ओडिसी के सम्मिलित स्वरूप का आठ गुना होगा। इसके रचयिता महर्षि व्यास हैं। यह काव्य तथा इतिहास को अपने में अन्तर्निहित कर महान् भारतीय सांस्कृतिक निधि को मुखरित करता है। यह स्वयं एक संस्कृति है। इसमें कवि ने कौरवों तथा पाण्डवों की कथा के माध्यम से तत्कालीन भारतीय सभ्यता और संस्कृति का विशाल चित्र अंकित किया है। इसमें संघर्ष संकुल भारतीय जीवन की यथार्थ कहानी है, जिसमें दो जीवन-मूल्यों का चित्र उकेरा गया है तथा तद्युगीन सम्पूर्ण विचारणा एवं युग-चेतना को समेटने का सफल प्रयास किया गया है। इसीलिए कहा गया है कि जो भारत में नहीं है, वह महाभारत में भी नहीं है यन्न भारते तन्न भारते। भारत का अर्थ है— भारतों का युद्ध। महाभारत का अर्थ हुआ ''भारत लोगों के महान् युद्ध का आख्यान्।''

महाभारत का आकार प्रकार—

'महाभारत' का प्रणयन १८ पर्वों या खण्डों में हुआ है, जिनके नाम इस प्रकार हैं— आदि, सभा, वन, विराट्, उद्योग, भीष्म, द्रोण, कर्ण, शल्य, सौप्तिक, स्त्री, शान्ति, अनुशासन, अश्वमेध, आश्रमवासी, मौसल, महाप्रस्थानिक तथा स्वर्गारोहण। प्रत्येक पर्व में वर्णित विषयों की सूची इस प्रकार है—

(१) आदिपर्व- महाभारत की रचना की कथा, ब्रह्मा की कृपा से गणेश द्वारा महाभारत का लेखन, चन्द्रवंश का इतिहास एवं कौरवों तथा पाण्डवों की उत्पत्ति, विदुर, कर्ण, कृष्ण, सात्यकि, कृतवर्मा, द्रोण, अश्वत्थामा, ध ष्टद्युम्न आदि के जन्म का व त्तान्त, कुन्ती तथा माद्री के गर्भ से धर्म, वायु, इन्द्र और अश्विनी कुमारों द्वारा युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव की उत्पत्ति, शिखण्डी का जन्म, दुष्यन्त और शकुन्तला का आख्यान, दक्ष, वैवस्वतमनु एवं उनके पुत्रों की जन्म-कथा कच-देवयानी की कथा, शान्तनु और गंगा का विवाह तथा भीष्म द्वारा आजीवन अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा, सत्यवती के गर्भ से चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य का जन्म, शान्तनु तथा चित्रांगद की म त्यु एवं विचित्र-वीर्य का राज्यभिषेक, विचित्रवीर्य की म त्यु पर माता सत्यवती के अनुरोध से कुरुवंश की व द्धि के लिए व्यास द्वारा विचित्रवीर्य की पत्नियों से ध तराष्ट्र, पाण्डु एवं विदुर का जन्म। ध तराष्ट्र एवं पाण्डु का विवाह, ध तराष्ट्र के सौ पुत्रों तथा पाण्डवों की जन्म कथा, द्रोण का परशुराम से अस्त्र प्राप्त करना तथा राजा द्रुपद से अपमानित होकर हस्तिनापुर आना एवं राजकुमारों की शिक्षा के लिए उनकी नियुक्ति, दुर्योधन द्वारा लाक्षाग ह में पाण्डवों को मारने की योजना तथा उसकी विफलता, हिडिम्ब का वध कर भीम का उसकी बहिन हिडिम्बा से ब्याह करना तथा घटोत्कच की

उत्पत्ति। द्रौपदी का स्वयम्वर तथा अर्जुन का लक्ष्यवेध कर द्रौपदी को प्राप्त करना, पाँचों भाइयों का द्रौपदी के साथ विवाह, द्रोण और विदुर के परामर्श से पाण्डवों का आधा राज्य प्राप्त कर इन्द्रप्रस्थ में अपनी राजधानी बनाना, मणिपुर में चित्रांगदा के साथ अर्जुन का विवाह, द्वारिका में सुभद्रा-हरण एवं अर्जुन के साथ विवाह, खाण्डववन का दाह।

(२) सभापर्व— मय दानव द्वारा अद्भुत सभा का निर्माण तथा नारद का आगमन, युधिष्ठर का राजसूय करने की इच्छा प्रकट करना, राजसूय का वर्णन, भीष्म के कहने पर श्री कृष्ण की पादपूजा, शिशुपाल का विरोध तथा कृष्ण द्वारा उसका वध, दुर्योधन को ईर्ष्या, द्यूतक्रीड़ा के लिए युधिष्ठिर का आह्वान, शकुनि की चाल से युधिष्ठिर का भाईयों तथा द्रौपदी को हार जाना, दुःशासन द्वारा द्रौपदी का चीर हरण, युधिष्ठिर आदि का वन गमन।

(३) वनपर्व— पाण्डवों का काम्यक् वन में प्रवेश तथा विदुर और श्रीकृष्ण का आगमन, व्यास जी के आदेश से पाण्डवों का इन्द्रकील पर्वत पर जाकर इन्द्र के दर्शन करना, अर्जुन की तपस्या एवं शिव जी से पाशुपतास्त्र की प्राप्ति उर्वशी का अर्जुन पर आसक्त होना, अर्जुन द्वारा उसका तिरस्कार करना तथा उर्वशी द्वारा उनका शापित होना, नल-दमयन्ती की कथा, परशुराम, अगस्त्य, सगर, भगीरथ, ऋष्यश ङ्ग, च्यवन मांधाता आदि की कथा, हनुमान् भीम-मिलन, सर्प-रूपी नहुष से संवाद एवं उसकी मुक्ति, द्रौपदी सत्यभामा संवाद, दुर्योधन का गन्धर्वों से युद्ध एवं उसकी पराजय, पाण्डवों द्वारा उसकी रक्षा एवं दुर्योधन का गन्धर्वों से युद्ध एवं उसकी पराजय, पाण्डवों द्वारा उसकी रक्षा एवं दुर्योधन की आत्मग्लानि, सावित्री-उपाख्यान, इन्द्र का कर्ण से कवच कुण्डल का दान-रूप में ग्रहण तथा दिव्यद ष्टि देना, यज्ञ युधिष्ठिर संवाद।

(४) विराटपर्व— अज्ञातवास के लिए पाण्डवों का विराट्नगर में प्रस्थान, कीचक का द्रौपदी को अपमानित करना तथा भीम द्वारा उसका वध, सुशर्मा से पाण्डवों का राजा विराट् की रक्षा करना, कौरवों का विराट् पर आक्रमण तथा पाण्डवों की सहायता से राजा विराट् की विजय, विराट् की पुत्री उत्तरा के साथ अभिमन्यु का विवाह।

(५) उद्योग पर्व— विराट नगर में श्रीकृष्ण के परामर्श से द्रुपद-पुरोहित का हस्तिनापुर आना, अर्जुन तथा दुर्योधन दोनों की सहायता करने का श्रीकृष्ण का आश्वासन, पाण्डवों की सैनिक तैयारी, संजय का दूत बनकर आना और पाण्डवों का दूत बन कर श्रीकृष्ण का दुर्योधन की सभा में जाना उनकी वार्ता का विफल होना, कुरुक्षेत्र में दोनों की सैन्य-योजना एवं व्यूह की रचना।

(६) भीष्मपर्व— व्यास जी द्वारा संजय को दिव्य द ष्टि की प्राप्ति, ध तराष्ट्र के पूछने पर संजय का युद्ध विवरण देना। दस दिनों तक भीष्म द्वारा घनघोर युद्ध तथा शिखण्डी की सहायता से भीष्म का पतन, भीष्म की शरशय्या तथा प्राण-त्याग के लिए उनकी उत्तरायण की प्रतीक्षा।

(७) द्रोणपर्व— अभिमन्यु का युद्ध, द्रोण द्वारा चक्रव्यूह का निर्माण एवं अभिमन्यु की म त्यु, अर्जुन द्वारा जयद्रथ का मारा जाना, कर्ण की शक्ति से घटोत्कच की म त्यु, द्रोणाचार्य का घोर युद्ध तथा ध ष्टद्युम्न द्वारा उनका वध, अश्वत्थामा का क्रोध कर नारायणशस्त्र का प्रयोग, श्रीकृष्ण द्वारा पाण्डव सेना एवं भीम की रक्षा।

(८) कर्णपर्व— कर्ण का सेनापति बनना, कर्ण द्वारा युधिष्ठिर की पराजय तथा पलायन, अश्वत्थामा को पराजित कर अर्जुन का युधिष्ठिर का समाचार लेने के लिए आना, युधिष्ठिर द्वारा अर्जुन का तिरस्कार तथा अर्जुन का युधिष्ठिर को मारने के लिए उद्यत होना, श्रीकृष्ण की शिक्षा से दोनों का प्रसन्नतापूर्वक मिलन, कर्णवध तथा युधिष्ठिर द्वारा शल्य का मारा जाना, दुर्योधन का सरोवर में प्रवेश।

(६) शल्यपर्वः गदापर्व— भीमसेन की ललकार सुनकर दुर्योधन का सरोवर से निकलना तथा भीमसेन के साथ गदा-युद्ध, भीम का दुर्योधन की जांघ तोड़ देना, बलराम का आना और क्रोध प्रकट करना, दुर्योधन की दशा देखकर अश्वत्थामा का शोक करना तथा उसका सेनापतित्व ग्रहण करना।

(१०) सौप्तिकपर्व— अश्वत्थामा द्वारा द्रौपदी के पाँच पुत्रों तथा अन्य वीरों का वध, अर्जुन का अश्वत्थामा को दण्ड देना तथा मणि लेकर अश्वत्थामा का पलायन।

(११) स्त्रीपर्व— जलप्रदानादि कर्म, ध तराष्ट्र का विलाप, संजय एवं विदुर का उनहें समझाना, गान्धारी का क्रोध करना तथा व्यास जी का उन्हें समझाना, स्त्री पुरुषों द्वारा अपने संबंधियों को जलांजलि देना।

(१२) शान्तिपर्व— युधिष्ठिर द्वारा महर्षि नारद से कर्ण का व त्तान्त जानकार शोक प्रकट करना, क्रमशः भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव तथा द्रौपदी का ग हस्थ-धर्म राज्य तथा धन की प्रशंसा करते हुए युधिष्ठिर को समझाना, श्रीकृष्ण का युधिष्ठिर के शोक-निवारण का प्रयत्न करना तथा सोलह राजाओं का उपाख्यान सुनना, श्रीकृष्ण के कहने पर युधिष्ठिर का भीष्म के पास जाना तथा भीष्म का युधिष्ठिर को राजधर्म, आपत्तिग्रस्त राजा के कर्त्तव्य एवं धर्म की सूक्ष्मता का उपदेश देना। नाना प्रकार के आख्यान, अनेक गीताएँ तथा मोक्ष के साधनों का वर्णन, यज्ञ में हिंसा की निन्दा तथा अहिंसा की प्रशंसा, सांख्ययोग का वर्णन, जनक तथा शुकदेव आदि ऋषियों की कथा।

(१३) अनुशासनपर्व— युधिष्ठिर को सान्त्वना देने के लिए भीष्म का अनेक कथाएँ कहना, लक्ष्मी के निवास करने तथा न करने योग्य पुरुष स्त्री और स्थानों का वर्णन, शरीर, मन और वाणी के पापों के परित्याग का उपदेश, दान-महिमाव्रत, उपवास आदि के फल, हिंसा तथा मांस-भक्षण की निन्दा, भीष्म का प्राणत्याग।

(१४) आश्वमेधिकपर्व— युधिष्ठिर का क्रोध करना तथा श्रीकृष्ण का उन्हें समझाना, अर्जुन से श्रीकृष्ण का मोक्ष-धर्म का वर्णन करना, उत्तरा की कथा, अभिमन्यु का श्राद्ध, म त बालक परीक्षित का श्रीकृष्ण द्वारा पुनरुज्जीवन, यज्ञ का प्रारम्भ तथा अर्जुन द्वारा अर्थ की रक्षा, विभिन्न प्रकार के दान एवं व्रत का वर्णन।

(१५) आश्रमवासिकपर्व— ध तराष्ट्र का गांधारी तथा कुन्ती के साथ वन जाना, गांधारी तथा कुन्ती का म त पुत्रों को देखने के लिए व्यास जी से अनुरोध करना तथा परलोक से म त पुत्रों का आना एवं दर्शन देना, ध तराष्ट्र, गान्धारी और कुन्ती की म त्यु।

(१६) मौसलपर्व— मौसल युद्ध में यदुवंशियों का नाश।

(१७) महाप्रस्थानिकपर्व— पाण्डवों द्वारा व ष्णिवंशियों का श्राद्ध करके हिमालय की ओर प्रस्थान, युधिष्ठिर के अतिरिक्त सभी भाइयों का पतन, युधिष्ठिर का सन्देह तथा उनका स्वर्ग में जाना।

(१८) स्वर्गारोहणपर्व— स्वर्ग में नारद तथा युधिष्ठिर में वार्तालाप, युधिष्ठिर का नरक देखना तथा भाइयों का क्रन्दन सुनकर नरक में रहने का निश्चय करना, इन्द्र तथा धर्म का युधिष्ठिर को समझाना, युधिष्ठिर का दिव्यलोक में जाना तथा अर्जुन कृष्णादि से भेंट, महाभारत का उपसंहार और माहात्म्य।

महाभारत का काल -

भारतीय परम्परा में महाभारत के युद्ध का समय द्वापर युग का अन्त और कलियुग का आरम्भ माना जाता है। भारतीय ज्योतिष की गणना के अनुसार कलियुग के आरम्भ का समय ईसा से इकत्तीस सौ दो वर्ष पूर्व माना जाता है। पं. इन्द्रनारायण द्विवेदी ने महाभारत के युद्ध और कलियुग के आरम्भ के काल का निर्णय बड़े विस्त त विवेचन के साथ किया है। पश्चिमी विद्वान् भारतीय ज्योतिष की इस गणना को आदर नहीं देते। युगों की भारतीय कल्पना तथा महाभारत का युगों के साथ सम्बन्ध उन्हें काल्पनिक और अमान्य प्रतीत होता है। उनकी द ष्टि में भारत की संस्कृति और उसका इतिहास अपेक्षाकृत अर्वाचीन है। अतः भारतीय संस्कृति और इतिहास की प्राचीनता के प्रति उनका उचित आदर नहीं है। वे भारतीय ग्रन्थों का समय यथा सम्भव ईस्वी सन् के आरम्भ के निकट रखने का प्रयत्न करते हैं। प्राचीन भारतीय इतिहास में कालगणना का कोई निश्चित आधान न होने के कारण भारतीय ग्रन्थों और व्यक्तियों की प्राचीनता प्रमाणित करने का पर्याप्त

साधन नहीं मिलता। इस संदेह की स्थिति में उनको भारतीय ग्रन्थों और व्यक्तियों का समय ईसा के अधिक से अधिक निकट रखने का अवसर मिलता है। अनिश्चय की अवस्था में प्राचीन ग्रन्थों और व्यक्तियों के सम्भाव्य काल की अर्वाचीन सीमा के निर्धारण की द ष्टि से उनका यह द ष्टिकोण ठीक है। किन्तु दूसरी और यह द ष्टिकोण भारत के प्राचीन तथ्यों के सम्बन्ध में एक अनुचित धारणा का पोषण करता है। भारत के जिन प्राचीन तथ्यों के सम्बन्ध में काल-निर्धारण के लिए पर्याप्त आधार उपलब्ध नहीं है, उनकी प्राचीनता की आस्था को आधुनिक और वैज्ञानिक मानदण्डों के अनुरोध के द्वारा खण्डित करना कहाँ तक उचित है, यह विचारणीय है।

प्राचीन भारतीय संस्कृति और साहित्य बहुत विशाल है तथा उसके अनेक रूप हैं। इतने विस्त त और विशाल साहित्य का निर्माण और विकास इतने प्राचीन काल में बहुत समय में हुआ होगा। आधुनिक मानदण्डों से इस विकास की गति की कल्पना नहीं की जा सकती। वैज्ञानिक द ष्टि से केवल युद्ध का समय निश्चित है। उसके पूर्व कम से कम शताब्दियों का अन्तर मानकर महाभारत, पुराण, दर्शन, उपनिषद्, ब्राह्मण, वेद आदि के समय का अनुमान लगाया जाता है। कालक्रम की अर्वाचीन सीमा का निर्णय तो ठीक माना जा सकता है किन्तु इससे प्राचीन ग्रन्थों के वास्तविक काल पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता, वरन् इसके विपरीत उनकी प्राचीनता आच्छादित हो जाती है। इस अर्वाचीन अवधि के अतिरिक्त प्राचीन इतिहास के आधुनिक काल निर्णय उतने संदिग्ध हैं, जितना संदिग्ध कि विश्वासी जनों की तत्सम्बन्धी आस्था को माना जाता है। प्राचीन भारत ग्रन्थों और व्यक्तियों की अर्वाचीन अवधि के वैज्ञानिक निर्धारण ने काल-निर्णय के सम्बन्ध में स्वयं अनिश्चित होते हुए भी भारतीय इतिहास के तथ्यों की प्राचीनतम् को बहुत आद्यात पहुँचाया है। यह प्राचीन भारतीय इतिहास और उसके अध्ययन की एक आधुनिक विडम्बना है।

वेद, उपनिषद् आदि के काल निर्णय की भाँति महाभारत का काल निर्णय भी पश्चिमी विद्वानों ने उक्त वैज्ञानिक प्रणाली के अनुसार किया है। यह वैज्ञानिक प्रणाली प्राचीन ग्रन्थों और तथ्यों की अर्वाचीन अवधि निर्धारण करके केवल यह सिद्ध करती है कि कोई अमुक ग्रन्थ अथवा व्यक्ति इस अवधि के बाद का नहीं हो सकता। यह अवधि ठीक होते हुए भी इसके निर्धारण से इन ग्रन्थों और तथ्यों का वास्तविक समय निश्चित नहीं होता, वरन् इसके विपरीत इनकी प्राचीनता की आस्था विचलित होती है। महाभारत के काल निर्णय की आधुनिक वैज्ञानिक विधि के अनुसार काल की सीमा ईसवी सन् के आरम्भ से आरम्भ होती है। ईसा की पहली शताब्दी में डायोनक्राइसोस्टोम नाम का एक ग्रीक लेखक भारतवर्ष में आया था। उसने लिखा है कि भारतवर्ष में एक लाख श्लोकों का इलियड है। यह ग्रीक लेखक दक्षिण भारत में आया था, इससे सिद्ध होता है कि ईसा की पहली शताब्दी में दक्षिण भारत में महाभारत का प्रचार था। उक्त ग्रीक लेखक का संकेत निश्चित रूप से महाभारत की ओर है; क्योंकि भारतवर्ष में एक लाख श्लोकों का एक यही ग्रन्थ प्रसिद्ध रहा है। डायोनक्राइसोस्टोम के प्रमाण से यह सिद्ध होता है कि महाभारत के अस्तित्व की अर्वाचीन अवधि ईसा की पहली शताब्दी अथवा ईसवी सन् ५० है। होल्त्समान आदि विद्वानों का यह अभिमत कि महाभारत का वर्तमान रूप ईसा की नवीं-दसवीं शताब्दी के निकट बना होगा पूर्णतः असत्य है। ईसा को सातवीं शताब्दी में कुमारिल भट्ट ने तथा कवि सुबन्धु और बाण ने महाभारत का उल्लेख किया है। ईसा की पांचवी शताब्दी के कई दानपात्रों में एक लाख श्लोकों के महाभारत और उसके रचयिता महर्षि व्यास का बड़े आदर के साथ उल्लेख किया गया है। इसके पूर्व भी महाभारत के उल्लेख मिलते हैं। किन्तु उनमें भारत अथवा महाभारत के नाम का ही निर्देश मिलता है, महाभारत के विषय और आकार का प्रमाण नहीं मिलता। उक्त दानपत्रों से यह प्रमाणित हो जाता है कि ईसा की पाँचवी शताब्दी के पूर्व एक लाख श्लोकों का महाभारत स्थिर रूप ग्रहण कर चुका था तथा भारत के सभी भागों में उनकी कथा का प्रचार के लिए सौ दो सौ वर्ष का समय भी दिया जाय, तो यही निष्कर्ष होगा कि ईसा की तीसरी-चौथी शताब्दी तक एक लाख श्लोकों का महाभारत स्थिर रूप ग्रहण कर चुका था और प्रसिद्ध हो चुका था।

किन्तु इसके पूर्व महाभारत संहिता के जो उल्लेख मिलते हैं, उनसे महाभारत के विषय और आकार के सम्बन्ध में कुछ निश्चित नहीं होता। उक्त दानपत्रों के पूर्व महाभारत के नाम का उल्लेख तो ईसवी पूर्व पाँचवीं शताब्दी से मिलता है। आश्वलायन ग ह्यसूत्र में सबसे पहले महाभारत के नाम का उल्लेख मिलता है। साहित्य के इतिहासकार आश्वलायन ग ह्यसूत्र का समय ईसवी पूर्व पाँचवी शताब्दी मानते हैं। इसके पूर्व महाभारत के नाम का उल्लेख उपलब्ध साहित्य में नहीं मिलता, इसी से पश्चिमी विद्वान ई॰ पूर्व पाँचवी शताब्दी को महाभारत की रचना की प्राचीनतम अवधि मानते हैं। विन्टरनित्स का मत है कि ईसवी पूर्व चौथी शताब्दी से लेकर ईसा की चौथी शताब्दी तक महाभारत के वर्तमान रूप का विकास हुआ है। पाँचवी शताब्दी के दानपत्रों से पहले एक लाख श्लोकों के महाभारत का कोई प्रमाण नहीं मिलता, इससे विदेशी विद्वान् यही अनुमान लगाते हैं कि इससे पहले एक लाख श्लोकों का महाभारत विद्यमान नहीं था। वे तीन संस्करणों में महाभारत का विकास मानते हैं, वह व्यास का चौबीस हजार श्लोकों वाला महाभारत रहा होगा और उसके बाद ईसा की पाँचवी शताब्दी तक एक लाख श्लोकों में उनका विस्तार हुआ होगा।

किन्तु आश्वलायन ग ह्यसूत्र में भारत और महाभारत दोनों नाम मिलते हैं। आकार की विशालता के कारण ही इसको 'महाभारत' का नाम मिला है। यदि एक लाख श्लोक संख्या के कारण इसे 'महाभारत' का नाम मिला हो, तब तो ईसा से पाँच शताब्दी पूर्व इसका अस्तित्व मानना होगा। महाभारत में चन्द्रगुप्त का कहीं उल्लेख नहीं है, इससे सम्पूर्ण महाभारत का ईसा की तीसरी शताब्दी से पहले होने का संकेत मिलता है। अनेक प्राचीन ग्रन्थों के परिवर्धित रूपों में अर्वाचीन प्रसंग मिलते हैं, इससे यह प्रमाणित होता है कि मूल रूप में प्राचीन होते हुए भी आगे चलकर इन ग्रन्थों का परिवर्धन उन कालों में हुआ है, जिनका संकेत अर्वाचीन संदर्भों से मिलता है। महाभारत के सम्बन्ध में बाह्य प्रमाणों का अनुसंधान बहुत हुआ है। महाभारत के तीन नामों और विभिन्न श्लोक संख्याओं के अन्तःसाक्ष्य के आधार पर उसके परिवर्धन की कल्पना की गई है, किन्तु महाभारत में मिलने वाले तथ्यों के अन्तःसाक्ष्य के आधार पर यह अनुसंधान करने का कदाचित् कोई प्रयत्न नहीं किया गया है कि इसमें किस शताब्दी के पूर्व महाभारत के वर्तमान रूप का अस्तित्व सिद्ध हो सकेगा। यदि द्विवेदी जी के मतानुसार चौबीस हजार श्लोक की संख्या को महाभारत के किसी संस्करण की श्लोक संख्या न मान कर उपाख्यान रहित श्लोकों की संख्या माना जाय, और आठ हजार आठ सौ कूट श्लोकों की संख्या मान ली जाये, तो सम्पूर्ण महाभारत व्यासकृत और मौलिक सिद्ध होता है। वैशम्पायन ने जनमेजय के नागयज्ञ में महाभारत सुनाया था और वे व्यास के शिष्य थे। अतः व्यास और वैशम्पायन के महाभारतों में आकार और काल का अधिक अन्तर न रहा होगा। अनुगायन में कुछ परिवर्धन होने की सम्भावना अवश्य हो सकती है। व्यास कौरव पाण्डवों के समकालीन थे। अतः इससे भी महाभारत की प्राचीनता का संकेत मिलता है। यदि वर्तमान महाभारत की एक लाख श्लोक संख्या का प्रमाण उक्त दानपत्रों से नहीं मिलता तो उसे असिद्ध करने का भी कोई प्रमाण इससे पहले की शताब्दियों में नहीं मिलता। महाभारत के तीन नामों और तीन वक्ताओं तथा विषयों की विभिन्नता के आधार पर महाभारत के परिवर्धन आदि के सम्बन्ध में जो मत उपस्थित किये गये हैं, वे केवल सम्भावनाओं का संकेत करते हैं, उन्हें भी पूर्णतः प्रमाणिक नहीं कहा जा सकता।

महाभारत के रचयिता व्यास -

भारतीय परम्परा के अनुसार महर्षि वेदव्यास ही महाभारत के प्रणेता हैं और इसके प्रमाण ग्रन्थ में उपलब्ध होते हैं। ये कृष्ण द्वैपायन व्यास महाभारत के रचयिता होते हुए भी उसके एक प्रधान पात्र के रूप में चित्रित हैं ओर कौरवों तथा पाण्डवों के दादा कहे गये हैं। इनका नाम अनेक दार्शनिक एवं साहित्यिक ग्रन्थों के निर्माण के रूप में प्रसिद्ध है। ये चारों वेदों के संकलयिता या विभागकर्त्ता तथा महाभारत और पुराणों के मान्य लेखक हैं। वेदों का विभाग करने के कारण ही इसका नाम व्यास पड़ा है। ये महाभारत के पात्रों के समकालीन एवं उनके निकट के संबन्धी भी थे। वेद का

व्यास या विस्तार करने के कारण इनका नाम व्यास पड़ा। विव्यास वेदान् यस्मात् स तस्मात् व्यास इति स्म तः। आदिपर्व, ६३।८८

प्राचीन विश्वास के अनुसार प्रत्येक द्वापर युग में आकर वेद व्यास वेदों का विभाजन करते हैं। इस प्रकार इस मन्वन्तर के अट्ठईस व्यासों के होने का विवरण प्राप्त होता है। वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर के २८ द्वापर बीत चुके हैं। 'विष्णुपुराण' में २८ व्यासों का मानोल्लेख किया गया है।

अट्ठाईसवें व्यास का नाम कृष्णद्वैपायन व्यास है। इन्होंने महाभारत एवं अट्ठारह पुराणों का प्रणयन किया है।

व्यास नामधारी व्यक्ति के संबंध में अनेक पाश्चात्त्य विद्वानों का कहना है कि यह किसी का अभिधान न होकर प्रतीकात्मक, कल्पनात्मक या छद्म नाम है। मैक्डोनल भी इसी विचार के समर्थक हैं, पर भारतीय विद्वान् इस मत से सहमत नहीं हैं। प्राचीन ग्रन्थों में व्यास का नाम, कई स्थानों पर, आदर के साथ लिया गया है। 'अहिर्बुध्न्यसंहिता' में व्यास वेद-व्याख्याता तथा वेदवर्गयिता के रूप में उल्लिखित हैं। इसमें बताया गया है कि वाक् के पुत्र वाच्यायन या अपान्तरतमा नामक एक वेदज्ञ थे, जो कपिल एवं हिरण्यगर्भ के समकालीन थे। इन तीनों व्यक्तियों ने विष्णु के आदेश से त्रयी (ऋग्यजुसाम), सांख्यशास्त्र एवं योगशास्त्र का विभाग किया था। इससे सिद्ध होता है कि व्यास का नाम कपिल एवं हिरण्यगर्भ की तरह एक व्यक्तिवाचक संज्ञा थी। अतः इसे भाववाचक न मानकर अभिधानवाचक मानना चाहिए। 'अहिर्बुध्न्य संहिता' में व्यास का नाम अपान्तरतमा भी प्राप्त होता है और उसकी संगति 'महाभारत' से बैठ जाती है। (महाभाारत में) अपान्तरतमा नामक वेदाचार्य ऋषि का उल्लेख है, जिन्होंने प्राचीनकाल में एक बार वेद की शाखाओं का नियमन किया था। 'महाभारत' के कई प्रसंगों में अपान्तरतमा नाम को व्यास से अभिन्न मान कर वर्णित किया गया है।

कतिपय विद्वान् व्यास को उपाधिसूचक मानते हैं। विभिन्न पुराणों के प्रवचनकर्त्ता व्यास कहे गए हैं और ब्रह्मा से लेकर कृष्ण द्वैपायन व्यास तक २७ से लेकर ३२ व्यक्ति इस उपाधि से युक्त बताये गये हैं। यदि पुराण ग्रन्थों की बातें सत्य मान जी जायँ तो 'जय काव्य' के रचयिता तथा कौरव-पाण्डव के समकालीन व्यास नामक व्यक्ति ३२वीं परम्परा के अन्तिम व्यक्ति सिद्ध होते हैं। इस प्रकार व्यास नाम का वैविध्य इसे भारतीय साहित्य की तरह प्राचीन सिद्ध करता है। म.म.पं॰ गिरधरशर्मा चतुर्वेदी का कहना है कि ''व्यास या वेदव्यास किसी व्यक्ति-विशेष का नाम नहीं, वह एक पदवी अथवा अधिकार का नाम है। जब जो ऋषि-मुनि वेदसंहिता का विभाजन या पुराण का संक्षेप कर ले वही उस समय व्यास या वेदव्यास कहा जाता है। किसी समय वसिष्ठ और पराशर आदि भी व्यास हुए। इस अट्ठाईसवें कलियुग के व्यास कृष्ण द्वैपायन हैं। उनके रचित या प्रकाशित ग्रन्थ आज पुराण के नाम से चल रहे हैं।'' उन्होंने इस संबंध में पुनः कहा ऋषि या मुनि जिस प्राणशक्ति का आविष्कारक या दूसरे शब्दों में उपासक रहा, वह उसी शक्ति के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वसिष्ठ, विश्वामित्र, कश्यप आदि नाम उपास्य शक्ति अनुसार ही प्रसिद्ध है। उनके व्यक्तिगत नाम दूसरे हैं, जो कहीं-कहीं पाये जाते हैं, इसी प्रकार, पुराणों के निर्माता का व्यक्तिगत नाम कृष्णद्वैपायन है और पदवी या अधिकार का नाम व्यास या वेदव्यास। कृष्णद्वैपायन शब्द में भी कृष्ण और द्वैपायन शब्द उत्पत्ति-स्थान के संबंध से विशेषण रूप से जोड़ा गया है।'' पुराण-परिशीलन, प ॰ ४८-४६

इस कथन से प्रतीत होता है कि व्यास एक उपाधि थी, जो वेदों ओर पुराणों के वर्गीकरण, विभाजन एवं संपादन के कारण प्रदान की जाती थी। आचार्य शंकर ने व्यास के संबंध में एक नवीन मत की उद्भावना की है। 'वेदान्तसूत्रभाष्य' में उनका कहना है कि प्राचीन वेदाचार्य अपान्तरतमा ही बाद में (द्वापर एवं कलियुग के सन्धि काल में) भगवान् विष्णु के आदेश से कृष्ण द्वैपायन के रूप में पुनरुद्भूत हुए थे। कृष्ण द्वैपायन व्यास के सम्बन्ध में अश्वघोष ने तीन तथ्य प्रस्तुत किये हैं—(क) इन्होंने वेदों को प थक्-प थक् वर्गों में विभाजित किया। (ख) इनके पूर्वज वसिष्ठ तथा शक्ति थे (ग) ये सारस्वतवंशीय थे तथा इन्होंने वेद-विभाजन जैसा दुस्तर कार्य सम्पन्न किया था। 'महाभारत'

में कृष्ण द्वैपायन को व्यास कहा गया है और इन्हें वेदों का वर्गीकरण करनेवाला माना गया है–।

इन्हीं कृष्ण द्वैपायन व्यास का नाम बादरायण व्यास भी था। इन्होंने अपनी समस्त ज्ञान-साधना बदरिकाश्रम में की थी, अतः ये बादरायण के नाम से प्रसिद्ध हुए। व्यासप्रणीत 'वेदान्तसूत्र' भी 'बादरायणसूत्र' के ही नाम से लोक-विश्रुत हुआ है। इनका अन्य नाम पाराशर्य भी है। इससे ज्ञात होता है कि इनके पिता का नाम पराश था। अलबेरुनी ने भी इन्हें पराशर का पुत्र कहा है और पैल, वैशम्पायन, जैमिनि तथा सुमन्तु नामक इनके चार शिष्यों का उल्लेख किया है, जिन्होंने क्रमशः ऋग्, यजु, साम एवं अथर्ववेद का अध्ययन किया था। पाणिनिकृत 'अष्टाध्यायी' में 'भिक्षुसूत्र' के रचयिता पाराशर्य व्यास ही कहे गये हैं। 'भिक्षुसत्र' 'वेदान्तसूत्र' का ही अपर नाम है। 'महाभारत' के शान्तिपर्व में इनका निवासस्थान उत्तरापथ हिमालय बताया गया है।

व्यास जी की शिक्षा कहाँ हुई, इसका कोई विशेष विवरण प्राप्त नहीं है। पर 'वंशब्राह्मण' तथा पुराणों में इनके गुरु 'जातुकर्ण्य' कहे गए हैं। श्रीमद्भागवत के अनुसार, इनका आश्रय सरस्वती तट पर था, जो कुरुक्षेत्र से कुछ पश्चिमोत्तर रहा होगा। आधुनिक विद्वान् 'कृष्ण-द्वैपायन व्यास' तथा 'बादरायण व्यास' को भिन्न-भिन्न व्यक्ति मानकर महाभारतादि ग्रन्थ के निर्माता कृष्ण-द्वैपायन को और ब्रह्मसूत्र के प्रणेता बादरायण-व्यास को स्वीकार करते हैं। इस विचार का खण्डन करते हुए म॰ म॰ पं॰ गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी का कहना हैः ''इस पर हमारा इतना ही वक्तव्य है कि इस प्रकार का भेद मानने का कोई मूल भारतीय वाङ्मय के प्राचीन ग्रंथों में नहीं मिलता, न जाने यह भेद मानने की कल्पना आधुनिक ऐतिहासिकों ने किस आधार पर उठाई है। एक ही व्यक्ति के भिन्न-भिन्न कारणों से अनेक नाम हो सकते हैं, जैसा कि हम ऊपर लिख आये हैं कि इनका कृष्ण यह नाम मुख्य था। द्वीप में पैदा होने के कारण द्वैपायन शब्द भी वासुदेव कृष्णआदि से भेद करने के लिए जोड़ दिया गया। इसी प्रकार, बदरी वन में तपस्या करने के कारण बादरायण नाम भी प्रसिद्ध हुआ। जैमिनिसूत्र और वेदान्तसूत्रों में बादरायण नाम ही उल्लिखित हुआ है, यह ठीक है; किन्तु पुराणादि में भी बादरायण नाम कहीं-कहीं पाया जाता है। जैसा कि–

आख्यानैश्चाप्युपाख्यानैर्गाथाभिः कल्पशुद्धिभिः।

पुराणसंहितां चक्रे भगवान् बादरायणः।।

महाभारत के संस्करण -

विद्वानों का मत है कि वैदिक यज्ञों के अवसर पर प्राचीन आख्यानों का गायन और वर्णन होता था। इन आख्यानों में प्राचीन वीरों की गौरव गाथायें गाई जाती थीं। इनके गाने वाले सूत, बन्दी, चारण आदि होते थे। वैदिककाल से ही वीरों और महापुरुषों की यह कीर्ति-गाथायें भारतवर्ष में प्रचलित थीं। ये वीर-गाथायें ही उस इतिहास के अंश हैं, जिसकी चर्चा ब्राह्मणों और उपनिषदों में मिलती है तथा जिसे वेद के उपब हण का साधन माना जाता है। महाभारत का विशाल काव्यमय इतिहास इन्हीं प्राचीन गाथाओं की परम्पराओं में है। महाभारत के अन्तर्गत भरतवंशी वीरों के ग हयुद्ध की मूलकथा के अतिरिक्त अन्य अनेक उपाख्यान मिलते हैं। विद्वानों का मत है कि ये उपाख्यान वर्तमान महाभारत की संहिता के संकलन के पूर्व भारतवर्ष की बिखरी हुई गाथा-परम्परा में प्रचलित थे। ये उपाख्यान और गाथायें किसी एक व्यक्ति की रचना नहीं थे। इन्हें प्राचीन लोक-काव्य कहा जा सकता है। ये एक प्रकार से सार्वजनिक-साहित्यिक-सम्पत्ति के रूप में थे। महाभारत के युद्ध की घटना भी वर्तमान महाभारत संहिता के संकलन के पूर्व इन गाथाओं और गीतिओं के रूप में वर्तमान रही होगी। विन्तटनित्स के मत में यही प्राचीन वीर-गाथा वर्तमान महाभारत का आधार है। विन्तटनित्स तथा अन्य विद्वानों का मत है कि लोक-काव्य की परम्परा में महाभारत की मूलगाथा का विस्तार होता गया तथा अन्य लोक उपाख्यानों का भी उसमें सम्मिश्रण होता गया। इस प्रकार महाभारत का आकार बढ़ता गया। विन्तटनित्स का यह भी मत है कि ब्राह्मणों और पुरोहितों ने बाद में इसमें अनेक उपाख्यान जोड़ दिये।